



Oct-Nov—2009

हिन्दी कथा साहित्य में चित्रित ईसाई परिवारों में वैवाहिक आदर्श



*डॉ. राम स्वरूप

* प्रवक्ता-हिन्दी, विद्यान्त हिन्दू कॉलेज, लखनऊ

हिन्दी कथा साहित्य में ईसाई संस्कृति के चित्रण के परिप्रेक्ष्य में परिवार में जो वैवाहिक आदर्श प्रचलित रहे हैं उनका आकलन करने पर यह तथ्य अवगत होता है कि भारतीय समाज में जो वैवाहिक आदर्श प्रचलित रहे हैं उनके अनुसार एक पत्नीव्रत का विधान है और पत्नी के जीवित रहते हुये पति के लिये दूसरा विवाह वर्जित है। गोपाल राम गहमरी लिखित 'नये बाबू' शीर्षक उपन्यास में बिपिन बिहारी कृष्ण शर्मा के रूप में एक ऐसे पात्र को प्रस्तुत किया गया है, जो पाश्चात्य शिक्षा ग्रहण करने के पाश्चात् अपनी रुढ़िवादी संस्कारों वाले पत्नी के पुरातन पंथी आचरण से क्षुब्ध हो जाता है। उसकी पत्नी रुक्मिणी उसके मित्र छेदी मिश्र से पर्दा करती है और अपने पति की अछानुसार न तो उसका आदर सत्कार करने की पाश्चात्य जीवन शैली औपचारिकता का निर्वाह करती है और न ही अपना घूँघट खोलकर बेपर्दा होती है। उसके इस आचरण से क्षुब्ध होकर बिपिन बिहारी कृष्ण शर्मा अपने दूसरे विवाह की तैयारी करने लगते हैं। यहाँ पर यह उपन्यासकार ने एक रोचक घटना का आयोजन किया है। नये बाबू अर्थात् बिपिन बिहारी कृष्ण शर्मा के दफ्तर में काम करने वाले अन्य बाबुओं की सहायता से वधू का चयन किया जाता है। निर्धारित मुहूर्त पर यह विवाह सम्पन्न होता है। एक सुन्दर और सजे हुए मकान में वर-वधू के मिलने की व्यवस्था की जाती है। बिपिन बिहारी कृष्ण शर्मा अपनी दूसरी पत्नी को शेर और शायरी एवं प्रेम गीत सुनाकर प्रसन्न नहीं कर पाते। उन्हें ऐसा आभासित होता है कि उनकी अप-टु-डेट पत्नी अंग्रेजी संभाषण की इच्छुक है। इसी उपक्रम में नव वधू वर के गालों को दाँतों से काट लेती है। इस अवसर पर नाटकीय रूप में इस कटु सत्य का पर्दाफास होता है कि नये बाबू के रक्त रंजित गालों और रक्त प्रवाह के लिये उत्तरदायी उनकी नव वधू कोई स्त्री नहीं है, वरन् नाट्य मण्डली का एक बालक है।

प्रेमचन्द ने भारतीय एवं पाश्चात्य स्त्रियों के विवाह विषयक विचारों को स्पष्ट किया है, किन्तु भारतीय कन्याओं के धर्म विवाह की अपेक्षा ईसाई लड़कियों के प्रति प्रेम विवाह की इतनी अच्छाई तो स्वीकार की जानी चाहिये कि इनमें माता-पिता को अनावश्यक रूप से कन्या विवाह के लिये चिन्तित नहीं होना पड़ता और न जात-भोज, ग्राम-भोज एवं साज-सजा के रूप में व्यर्थ की धूम-धाम और देहेज आदि सामग्री संग्रह में एक विपुल धनराशि को ही व्यय करना पड़ता है। भारतीय कन्याओं के समतुल्य ईसाई कन्याएँ अपने माता-पिता पर भार नहीं समझी जाती। उनके समाज में कन्याओं की वैवाहिक स्वतंत्रता ने ही माँ-बाप का यह बोझ हल्का कर रखा है। यह बात दूसरी है कि प्रेम-विवाह में बँधे ईसाई दम्पतियों का अन्यायन्य प्रेम चरम स्थिति से नीचे की ओर चलता है और एक दिन तलाक के रूप में समाप्त भी हो जाता है, जबकि धर्म विवाह में

बँधे भारतीय दम्पति का प्रेम, वासनाहीन होने के कारण अवस्था की परिपक्वता के साथ उत्तरोत्तर चरमावस्था की ओर अग्रसर होता चलता है।

'सेवासदन' उपन्यास में लेखक ने स्वीकार किया है कि भारतीय स्त्री-पुरुषों का विवाह सम्बन्ध धर्म पर आधारित है इसमें भिन्न ईसाई जाति में वह केवल प्रेम-सम्बन्ध पर ही टिका हुआ है। यही कारण है कि भारतीय स्त्री-पुरुषों का परिणय बन्धन क्षणिक और देहिक ही नहीं होता, प्रत्युत स्थिर और पारलौकिक भी होता है। हिन्दू और ईसाई धर्मों की वैवाहिक मान्यताओं का भेदात्मक चित्रण प्रेमचन्द ने शांता और ईसाई लड़कियों के वार्तालाप में किया है।

भारतीय युवक-युवतियों के विवाह में उनके वरिष्ठों का हस्तक्षेप, फलतः अपने बच्चों को गुड्डा-गुड्डियों की तरह सजाकर उनका अनमेल-विवाह तथा विवाह के पश्चात् पति गृह गमन के अवसर पर कन्या का बिलख-बिलख कर रोने की अच्छी हँसी प्रेमचन्द ने अपनी उन्माद कहानी में उड़वाई है। इस प्रकार की समस्त रुढ़ियों से मुक्त एक ईसाई युवती जेनी मनहर से प्रश्न करती है- दुल्हन रोती क्यों है? मनहर-रोने का रिवाज चला आता है, हालाँकि सभी जानते हैं कि वह हमेशा के लिये नहीं चली जा रही है, फिर भी सारा घर फूट-फूट कर रोता है, मानों वह काले पानी भेजी जा रही हो। जेनी-मैं तो उस तमाशे पर खूब हँसूँ। ईसाई स्त्रियों के मन में माता-पिता, भाई-बहिन व परिचित सखी-सहेलियों से विमुक्त होने की वेदना इतनी नहीं उभरती, जितनी कि अपने प्रेमी पति से मिलने की आकांक्षा उन्हें सुख प्रदान करती है।

'रंगभूमि' शीर्षक उपन्यास में प्रेमचन्द ने प्रभु सेवक नामक पात्र के माध्यम से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया है कि ईसाई संस्कृति का जो स्वरूप व्यवहारतः परिलक्षित होता है, उसमें कतिपय अपवादों को छोड़कर दाम्पत्य जीवन को सर्वथा निन्द्य मानने का खण्डन किया गया है और न ही संसार के समस्त प्राणियों को संन्यास धारण कर लेने का औचित्य निर्दिष्ट किया गया है। उक्त कृति में यह मंतव्य भी दृष्टव्य है कि विवाह सदैव स्वजातियों में करना चाहिये। यूरोपियन लोग हिन्दुस्तानी ईसाइयों का बहुत आदर नहीं करते और अनमेल विवाहों का परिणाम अच्छा नहीं हो। 'रंगभूमि' उपन्यास में रानी जाहनवी के उक्त कथन का उत्तर चाहे मिसेज सेवक यों अवश्य दे दें कि 'हम और वे एक हैं। हम और वे एक ही खुदा को मानते हैं, एक ही गिरजा में प्रार्थना करते हैं, और एक ही नबी के अनुचर हैं। हमारा और उनका रहन-सहन, खान-पान, रीति-व्यवहार एक हैं।' लेकिन फिर भी वह विदेशी ईसाइयों को भारतीय ईसाइयों से अधिक उन्नत और श्रेष्ठ मानती हैं।

उन्नीसवीं शती में उत्तरार्द्ध में विवाह सम्बन्धी कुछ अधिनियम भी पारित किये गये। 1872 में "क्रिश्चियन मैरिज अधिनियम" के अन्तर्गत ईसाई विवाह

इच्छुकों को विवाह निबन्धक को तद्विषयक सूचना देनी पड़ती थी तथा उनमें से एक को यह घोषणा करनी पड़ती थी कि उनके इस विवाह सम्बन्ध के विषय को लेकर कोई वैधानिक अड़चन नहीं है और यदि उनमें से कोई अवयस्क हो तो यह घोषणा प्रकार के विवाह में पुरुष की आयु 16 वर्ष तथा स्त्री की आयु 13 वर्ष से अधिक होनी आवश्यक थी। परन्तु अब यह आयु क्रमशः 18 वर्ष और 15 वर्ष हो गयी है, क्योंकि बाल-विवाह निरोधक कानून ईसाइयों पर भी लागू होता है।

भारतीय ईसाइयों के प्रेम और विवाह सम्बन्धी दृष्टिकोण के ब्रिटिश ईसाइयों से भिन्न इंगित करते हुए यशपाल ने 'बारह घण्टे' नामक उपन्यास में जेरी के प्रति लॉरेन्स के निम्नलिखित कथन के माध्यम से स्पष्ट किया है कि, "लॉरेन्स ने उठने के लिये सोफा-कुर्सी को बाहों पर हाथ टिका दिये पामर तत्परता से कुर्सी पर सीधा हो गया- नहीं, नहीं, यह सब पश्चिम की बातें हैं, हम इण्डियन हैं। विवाह और प्रेम के सम्बन्ध में हम लोग पश्चिम की तरह छिदले और अस्थिर नहीं हो सकते.... झगड़ा हुआ, तलाक हो गया, नयी शादी हो गयी। इस हफ्ते विधुर, विधवा हुये, दूसरे हफ्ते नयी शादी कर ली। जैसे एक नौकरी छूट दूसरी कर ली, गेम में पार्टनर बदल लिया। यह भी कोई आदर्श है? उसने जेनी की तरफ देखा, क्यों डार्लिंग!"¹⁴

इसी परिप्रेक्ष्य में फणीश्वरनाथ 'रेणु' ने अपनी कथाकृति 'परत : परिकथा' में इसका निदर्शन किया है- "किन्तु आश्चर्य, मेरे पतिदेव अंग्रेजों के सभी आरोपों को स्वीकार करते हैं- हाँ, गीता। तुम्हारे भाई-बन्धु ठीक ही कहते हैं। मैं डकैत हूँ, जालसाज हूँ, ठग हूँ, खूनी हूँ।"¹⁵

पहली बार, अपने स्वामी के साथ इलाके में गयी थी, मैं। अर्द्धवार्षिक कैम्प में। मधुचन्दा कैम्प। मधुचन्दा, गाँव का नाम है। दुलारीराय के कगार पर, चार माइल दक्खिन बसा हुआ, मधुचन्दा-हनीमून? खजाना वसूली के लिये जनरल मैनेजर का कैम्प इलाके में दो बार जाता। अर्द्धवार्षिक-एक सप्ताह का। वार्षिक-सवा महीने तक।राशि-राशि पुखन के फलों की वह सेज। गाँव की मलिन लड़कियों को एक-एक गिन्नी पुरस्कार दिया गया था।¹⁶

चार्ल्स तथा मिस स्पेन्सर के माध्यम से रामनारायण शुक्ल ने 'महेन्द्रा का भाई' नामक कथाकृति में यह संकेत किया है कि अपनी भावी पत्नी से घनिष्ठता एवं आचार-व्यवहार में निकट सम्पर्क बना लेना ईसाई समाज में अनुचित नहीं समझा जाता है।

'इतनी अच्छी तरह सजा हुआ फ्लैट उसने अपने जीवन में पहले नहीं देखा था। सब कुछ इतनी कीमती थी कि उसे आश्चर्य हुआ। उसे अपने घर की याद आयी और वह झेंप गया। चार्ल्स ने उसका परिचय नहीं अपनी माँ तथा मिस स्पेन्सर से करवाया। मिस स्पेन्सर बहुत ही खूबसूरत थीं। वह बगल के फ्लैट में रहती थीं और शौघ ही उन दोनों की शादी होने वाली थीं।'¹⁶

डॉ. माइकल और मिसेज एलिजाबेथ के रूप में एक ऐसे ईसाई दम्पति का चरित्रांकन 'टूटने बिखरते लोग' नामक उपन्यास में योगेश कुमार ने किया है, जो परस्पर विरोधी विचारों के कारण अपने जीवन को दुःखमय बना लेते हैं- "मुझे डॉक्टर माइकल की हालत पर तरस आने लगा और मुझे ऐसा लगने लगा कि जैसे फाँसी का तख्ता व्यक्ति के लिये उतना भयावह नहीं होता, जितना कि अन्तरात्मा का आक्रमण, जो हर समय और हर काम में और हर जगह व्यक्ति में काँट चुभाती रहती है।

मुझे मिसेज एलिजाबेथ माइकल पर गुस्सा आने लगा। वह एक परम्परावादी पत्नी का जीवन जीना चाहती थी, जिसके पास एक लम्बा चौड़ा मकान हो, जिसमें स्पेनी शैली का फर्नीचर हो और जिसके बच्चे येल और प्रिंस्टन में शिक्षा पाते हों। वह शायद इस गहराई तक सोच भी नहीं सकती थी कि इस पारम्परिक प्रतिष्ठा को बनाये रखने के लिये वह अपने पति की मौत का सामान जुटा रही है।"¹⁷

'जमा हुआ स्वप्न' नामक कथाकृति में ऊषा चौधरी ने श्रीमती वीना ऐलन जैसी पतिव्रता नारी के माध्यम से इस तथ्य की ओर संकेत किया है कि मेजर

ऐलन से विवाह और धर्म परिवर्तन के पश्चात् किस प्रकार से एक वर्ष बाद ही उनके इंग्लैण्ड चले जाने पर वे उनकी प्रतीक्षा में आजीवन एकाकी बनी रहती है। मेजर ऐलन विवाह के एक वर्ष बाद ही श्रीमती बीना ऐलन को भारत छोड़कर स्वयं इंग्लैण्ड चले गये। चार वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी उन्होंने श्रीमती बीना की कोई खबर न ली। वह निरन्तर प्रतीक्षा में रहती थी। शायद कोई समाचार मिले, किन्तु सदैव उन्हें निराशा ही हाथ लगी। आस-पास रहने वाले और उनके सम्पर्क में आने वाले लोगों को आश्चर्य होता था कि यह सामान्य सी दिखने वाली भारतीय महिला, किस प्रकार दो विदेशियों से विवाह रचाने में सफल हो गयी। इस समय उनका वर्तमान जीवन एकाकी और ठहरा हुआ सा था। वह फिर से नया जीवन जीना चाहती थी। परन्तु उन्हें कोई मार्ग नहीं सूझ रहा था कि किस प्रकार जीवन की एकरसता को तोड़े? उनकी यह ललक प्रायः उनकी बेटियों के क्रोध में ढल जाती थी। अतः धनाभाव का कष्ट उनके परिवार को नहीं था।

हिन्दी कथा साहित्य के प्रारम्भिक विकास काल में वैधव्य की समस्या को विस्तार से विश्लेषित किया गया है। अधिकांश सम्बन्धित कथाकारों ने इस कुप्रथा का चित्रण भारतीय अथवा हिन्दू पात्रों में चारित्रिक सन्दर्भ में ही किया है, परन्तु कतिपय कथाकार ऐसे भी हुये हैं, जिन्होंने स्पष्टतः यह दर्शाने का प्रयास किया है कि ईसाई संस्कृति के प्रभाव स्वरूप जो नवजागरण हुआ उससे अनुप्राणित भारतीय पात्र भी विधवा विवाह के सामर्थक बन गये।

पूर्व प्रेमचन्द उपन्यास साहित्य में रामानन्द दुबे ने 'जर्मन कोयल' शीर्षक से एक कृति की रचना की है। इसमें लंदन की बकिंगहम गेट का निवासी रॉबर्ट मसारिन मुख्य पात्र के रूप में चित्रित किया गया है। उसकी प्रथम पत्नी की मृत्यु हो जाती है और वह अपना दूसरा विवाह एक 36 वर्षीय सुन्दर युवती वार्था से कर लेता है। वार्था जर्मन स्त्री है और वह अपने प्रथम पति के पुत्र कॉनरॉड को भी साथ लाती है। रॉबर्ट मसारिन का अपनी प्रथम पत्नी से उत्पन्न पुत्र निजेल अत्यन्त शान्त स्वभाव का युवक है, परन्तु फिर भी उसकी विमाता वार्था उसके साथ उचित व्यवहार नहीं करती है। रॉबर्ट मसारिन यह जानते हुये भी उसका विरोध नहीं करता, क्योंकि वह वार्था के सौन्दर्य के प्रति अतिशय रूप में आसक्त है। उसकी इस आशक्ति का अनुचित लाभ उठाकर वार्था निजेल पर अशर्कियों की चोरी का मिथ्या दोषारोपण करती है और इस अपराध में दंड स्वरूप उसे घर से निकाल देती है। ऐसी स्थिति में निजेल अपनी विवशता के कारण ब्लैक नामक व्यक्ति की सहायता से बुद्धि कौशल के द्वारा इस तथ्य का पता लगा लेता है कि वार्था ने ही षड्यंत्र करके वे गहने चोरी से भिजवा दिये थे। इस षड्यंत्र का उद्घाटन होने पर वार्था अपने पुत्र के साथ घर से निकल जाती है और निजेल अपने घर वापस लौटता है। इस रूप में यह ईसाई नारी की विमाता रूप का कलंकित परिचय प्रस्तुत करता है।

वर्तमान समय में विवाह से सम्बन्धित इन सभी आदर्शों में तेजी से परिवर्तन हो रहा है। आज शिक्षा के विकास और तार्किक दृष्टिकोण के कारण बाल-विवाह की समस्या लगभग समाप्त हो चुकी है। विधवा स्त्रियों का पुनर्विवाह भी करना किसी भी प्रकार बुरा नहीं माना जाता। अनेक संस्थाओं के माध्यम से दहेज प्रथा की बुराइयों का प्रचार किया जाता है और विवाह विच्छेद की घटनाओं में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। यद्यपि यह सच है कि विवाह के क्षेत्र में व्यक्ति की इच्छा का महत्त्व बढ़ा है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सेवासदन, मुंशी प्रेमचन्द, पृष्ठ-180, 2. मानसरोवर, भाग-2, मुंशी प्रेमचन्द-118, 3. रंगभूमि भाग-1, मुंशी प्रेमचन्द-224, 4. बारह घण्टे, यशपाल पृष्ठ-105, 5. परती: परिकथा, फणीश्वरनाथ रेणु पृष्ठ-387, 6. महेन्द्रा का भाई, रामनारायण शुक्ल, पृष्ठ-32, 7. टूटते बिखरते लोग, योगेश कुमार, पृष्ठ-53